

## CHAPTER 42

### SANSKRIT

#### Doctoral Theses

01. आर्या (रश्मि)

**स्फोटसिद्धि की गोपालिका टीका का समीक्षात्मक अध्ययन।**

निर्देशक : प्रो. रणजीत कुमार मिश्र

Th 27527

*सारांश*

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध का विषय 'स्फोटसिद्धि की गोपालिका टीका का समीक्षात्मक अध्ययन' है। स्फोटसिद्धि मंडन मिश्र की कृति है जिस पर ऋषिपुत्र परमेश्वर ने गोपालिका टीका लिखी है। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध को छः अध्यायों में विभाजित किया गया है।

*विषय सूची*

1. मण्डनमिश्र एवं स्फोटदर्शन: ऐतिहासिक एवं सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य 2. मण्डनमिश्र सम्मत स्फोटसिद्धि की केन्द्रीय अवधारणाएं 3. मीमांसादर्शन का स्फोट-प्रत्याख्यान तथा मण्डनमिश्र 4. न्यायदर्शन स्फोट-प्रत्याख्यान तथा मण्डनमिश्र 5. मण्डनोत्तर स्फोटदर्शन 6. गोपालिका टीका के परिप्रेक्ष्य में ऋषिपुत्रपरमेश्वर के अवदान का मूल्यांकन। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

02. कुसुम लता

**काशिकावृत्ति एवं सिद्धान्तकौमुदी के समास प्रकरण का तुलनात्मक अध्ययन: न्यास और बालमनोरमा टीकाओं के सन्दर्भ में।**

निर्देशक : डॉ. जगमोहन

Th 27529

*सारांश*

काशिकावृत्ति एवं सिद्धान्तकौमुदी के समास प्रकरण का तुलनात्मक अध्ययन: न्यास और बालमनोरमा टीकाओं के सन्दर्भ में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में त्रिमुनि व्याकरण परम्परा को स्वीकार करते हुए दोनों टीकाकारों ने 'समास प्रकरण' के अन्तर्गत अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि, द्वन्द्व, एकशेष, अलुक् तथा समासाश्रयविधि प्रकरण का न्यास और बालमनोरमा टीकाओं के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। प्रथम अध्याय - अव्ययीभाव समास द्वितीय अध्याय - तत्पुरुष समास तृतीय अध्याय - बहुव्रीहि, द्वन्द्व एवं एकशेष समास चतुर्थ अध्याय - सर्वसमासान्त एवम् अलुक् समास प्रकरण पञ्चम अध्याय - समासाश्रय विधि प्रकरण अध्ययन हेतू सूत्र एवं अध्यायक्रम वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के अनुसार लिया गया है। अव्ययीभाव समासान्तर्गत लगभग १५, तत्पुरुष

मे ४०, बहुव्रीहि, द्वन्द्व एवं एकशेष में १४, सर्वसमासान्त एवम् अलुक् समास प्रकरण में १२ तथा समासाश्रयविधि प्रकरण में १६ सूत्रों का अध्ययन किया गया है। अन्त मे उपसंहार दिया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्रत्येक प्रकरण का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला गया कि दोनों टीकाकारों ने समान मत का प्रतिपादन किया है। केवल उदाहरण भिन्न दिए गए हैं, किन्तु विषय समान ही प्रतिपादित किया गया है। किन्हीं स्थानों पर न्यासकार विस्तार से चर्चा करते हैं तो कहीं बालमनोरमाकार। किन्तु दोनों ही टीकाकार एकमत ही सिद्ध हुए हैं। कहीं भी वैमत्य प्रकट नहीं हुआ। कहीं पर न्यासकार दार्शनिक टिप्पणी करते हैं तो वहीं बालमनोरमाकार लौकिक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यथा - "यूपदारु " मे कथित प्रकृति- विक्रति भाव एवं बालमनोरमा मे कथित "खट्वारूढो जाल्मः " आदि। इसी प्रकार प्रत्येक सूत्र पर दोनों टीकाकारों ने पर्याप्त विवरण प्रस्तुत किया है। जिसमें से मुख्य रूप से उन्हीं सूत्रों का ग्रहण किया गया है जिनमें कुछ विशिष्ट कथन किया गया है अथवा कुछ उदाहरणों मे भिन्नता मिली है। न्यासकार परिभाषाओं का सहारा लेते हैं तो वहीं बालमनोरमाकार महाभाष्य वार्तिकों का प्रयोग करते हैं। समास प्रकरण के अध्ययनातर्गत आदेश, निषेध, पुंवद्भाव, अलुक् आदि अन्य विषयों को भी वर्णित किया गया है। जहां आवश्यकता लगी टीकाकारों ने वही अपना मत रखा, अन्यथा वे मौन धारण करते हैं। कहीं कहीं वे अपना स्वतंत्र मत भी रखते हैं।

### विषय सूची

1. प्राक्कथन 2. अव्ययीभाव समास 3. तत्पुरुष समास 4. बहुव्रीहि समास, द्वन्द्व समास एवं एकशेष समास 5. सर्वसमासान्त एवं अनुक् समास प्रकरण 5. समासाश्रय विधि प्रकरण। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

03. ज्योति

**उत्तरपाणिनीय व्याकरण सम्प्रदायों में विभक्त्यर्थ प्रकरण का भाषावैज्ञानिक अध्ययन।**

निर्देशक : प्रो. श्रीवत्स

Th 23550

### सारांश

मानवीय ज्ञान का अधिकांश भाग शब्दप्रमाण से संचित किया हुआ होता है। शब्द प्रमाण से प्रमाणित ज्ञान की महत्ता अन्य प्रमाणों से प्रमाणित ज्ञान की अपेक्षा अधिक है। वाग्व्यवहार की दृष्टि से पद को वाक्य संरचना की उच्चतम इकाई माना गया है। परन्तु पद तब तक महत्त्वपूर्ण नहीं माना जा सकता जब तक उसका वाक्य में प्रयोग कर अन्य पदों से सम्बंध निर्धारण न किया जाए। पदों के पारस्परिक सम्बंध से ही वाक्यार्थ ज्ञान सम्भव है। संस्कृत व्याकरण की एक सुदीर्घ और लम्बी परम्परा रही है, वेदों प्रारम्भ हुई संस्कृत भाषिक विश्लेषण की यह परम्परा पाणिनीय अष्टाध्यायी से पराकाष्ठा को प्राप्त हुई। पाणिनीय परम्परा आधारित व्याकरण की इस लम्बी शृंखला के उपरान्त भी परवर्ती काल में भाषिक समाज में परिवर्तन होने के साथ-साथ नयी-नयी शिक्षण पद्धतियों के अनुसार नवीन व्याकरण ग्रंथों की आवश्यकता अनुभूत होने के परिणामस्वरूप अनेक स्वतंत्र व्याकरण सम्प्रदायों का प्रचलन आरम्भ हुआ। भाषा शिक्षण के साथ-साथ नवीन प्रयोगों की सार्थकता प्रतिपादित करने हेतु, जैन, बौद्ध एवं वैष्णव सम्प्रदाय सम्बंधी अवधारणाओं का समावेश करने हेतु तथा भाषिक प्रयोगों की

समसामयिकता के औचित्य को दर्शाने हेतु एवं व्याकरण जैसे दुरुह विषय को सरल तथा संक्षेप करने हेतु अनेक व्याकरण सम्प्रदायों का आविर्भाव हुआ। परवर्ती काल में पाणिनि परवर्तीकालीन इन सभी व्याकरण सम्प्रदाय की उपयोगिता, तार्किकता तथा वैज्ञानिकता कहाँ तक युक्तियुक्त है? परवर्तीकालीन व्याकरण की यह सुदीर्घ परम्परा मात्र पाणिनि प्रयुक्त विषयों का पिष्टपेषण है अथवा वास्तव में भाषिक विकास को अपने अन्दर समाए हुए है? इन जिज्ञासाओं के शमन हेतु - भाषा की व्यवहार्य इकाई पद जो वाक्य में प्रयोगार्हता की मुख्य शर्त है तथा जिसमें प्रयुक्त होने वाली भिन्न-भिन्न विभक्तियाँ, विभिन्न अर्थों का आधान कराती है, वाक्यगत विशिष्ट संरचनाओं और विभिन्नताओं का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण उपस्थापित करने वाले कारक एवं विभक्ति प्रकरण सम्बंधी अध्ययन का सु-अवसर प्राप्त हुआ। प्रस्तुत शोध प्रबंध में पाणिनि तथा उनके परवर्ती परम्परा में आए कातन्त्र व्याकरण से प्रारम्भ करके प्रयोगरत्नमाला व्याकरण के अन्तर्गत आए कारक एवं विभक्ति सम्बंधी विषयों का विवेचन किया गया है। कारक एक ऐसा तत्त्व है जिसकी संकल्पना प्रायः सभी भाषाओं में व्याप्त है। मुख्य रूप से कारकों की अभिव्यक्ति विभक्ति पर आश्रित है। वास्तव में विभक्ति वह पदार्थ है जिसके बिना संस्कृत भाषा की संकल्पना भी नहीं की जा सकती। अतः यह विभक्ति कारक के अतिरिक्त अन्य किन भाषायी तत्त्वों का ग्रहण कराती है? तथा पाणिनि परवर्ती काल में इनका स्वरूप व अर्थ किन भाषायी परिवर्तनों और परिवर्धनों को निरूपित करता है? पाणिनि परवर्तीकाल में निर्मित इन व्याकरण सम्प्रदायों ने भाषा में प्रयुक्त विभक्तियों के अर्थों में होने वाले सभी परिवर्तन अथवा परिवर्धनों को क्या अपने सम्प्रदायों में निरूपित किया गया है अथवा नहीं? साहित्यगत प्राप्त होने वाले विभक्ति और कारक सम्बंधी व्यत्ययों का नियमीकरण किस प्रकार अपने सम्प्रदायों में समाविष्ट किया है? इन मुख्य दृष्टियों को केन्द्र में रखते हुए "उत्तरपाणिनीय व्याकरण सम्प्रदायों में विभक्त्यर्थ प्रकरण का भाषावैज्ञानिक अध्ययन" विषय पर शोध कार्य करना मेरे लिए इष्ट है। विषय पर अध्ययन करते हुए मेरे द्वारा भाषावैज्ञानिक अध्ययन सम्बन्धी तीन प्रविधियों ऐतिहासिक प्रविधि, तुलनात्मक प्रविधि एवं वर्णनात्मक प्रविधि का आश्रय लिया गया है।

### विषय सूची

1. विभक्त्यर्थ - परिचय तथा विवेचन
2. प्रथमा विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के सन्दर्भ में)
3. द्वितीय विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के सन्दर्भ में)
4. तृतीय विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के सन्दर्भ में)
5. चतुर्थ विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के सन्दर्भ में)
6. पंचमी विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरण सम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के संदर्भ में)
7. षष्ठी विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के संदर्भ में)
8. सप्तमी विभक्ति - अर्थ एवं परिचय (पाणिनि एवं उत्तरवर्ती व्याकरणसम्प्रदायों की तुलनात्मक समीक्षा के सन्दर्भ में) । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

04. तेज प्रकाश

**वाक्यपदीय-सिद्धान्तों का मूल महाभाष्य : एक विवेचनात्मक अध्ययन (नवाह्निक के विशेष सन्दर्भ में) ।**

निर्देशक : प्रो. अनीता शर्मा

Th 27905

*सारांश*

वाक्यपदीय में व्याकरण के विभिन्न सिद्धान्तों, प्रमेयों का विवेचन है। वाक्यपदीय के अनुसार महाभाष्य में जिन न्यायबीजों का दर्शन, सूत्रों और वार्तिकों का व्याख्यान प्रसंगानुकूल विद्यमान है, वे वाक्यपदीय में एक व्यवस्थित क्रमबद्धता के साथ निदर्शित हैं। काशिका में वाक्यपदीय को “शब्दार्थसम्बन्धीयं प्रकरणम्” कहा गया है। आचार्य भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में स्वयं कहा है कि “सर्वेषां न्यायबीजानां महाभाष्ये निबन्धने ” अर्थात् व्याकरण के समस्त न्यायबीज महाभाष्य में विद्यमान हैं। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध चार अध्यायों में विभक्त है। इसकी भूमिका में व्याकरण के वेदाङ्गत्व को निरूपित किया गया है। वस्तुतः वाक्यपदीय एक व्याकरण का ग्रन्थ है और महाभाष्यकार ने व्याकरण के प्रयोजन “वेदानां रक्षार्थमध्ययं व्याकरणम्” को स्वीकार करते हुए प्रयोजनों में सर्वप्रथम स्थापित किया है, जिससे इस प्रयोजन की मुख्यता का भी बोध होना स्वतः स्वाभाविक है। अतः इस अध्याय में वाक्यपदीय के सिद्धान्तों के मूल के विवेचन को ध्यान में रखते हुए व्याकरण का वेदाङ्गत्व व्याख्यात किया गया है। शोधप्रबन्ध के प्रथम अध्याय में वाक्यपदीय में निहित सिद्धान्तों का उद्देशतः विवेचन किया गया है। वाक्यपदीय के सिद्धान्त को बताने से पूर्व ‘सिद्धान्त’ शब्द का प्रतिपादन किया गया है। विवेचन के अन्त में व्याकरण के प्रकरण ग्रन्थ वाक्यपदीय के शब्द, अर्थ और प्रक्रियापक्ष सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किए गए हैं। समस्त वाक्यपदीय के सभी बिन्दु उक्त त्रय के अन्तर्गत समाहित हो जाते हैं। अतः द्वितीय अध्याय महाभाष्य के नवाह्निक के आधार पर वाक्यपदीय में वर्णित शब्द सिद्धान्त से सम्बन्धित है। तृतीय अध्याय में महाभाष्य के नवाह्निक के आधार पर वाक्यपदीय में वर्णित अर्थ सिद्धान्त का विवेचन किया गया है। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध के अन्तिम चतुर्थ अध्याय में समस्त वाक्यपदीय में निदर्शित प्रक्रियापक्ष का निदर्शन किया गया है।

*विषय सूची*

1. वाक्यपदीय में सिद्धान्तों का उद्देश्य 2. ‘शब्द’ सिद्धान्त 3. ‘अर्थ’ सिद्धान्त 4. वाक्यपदीयमें शब्दसाधुविषयक प्रक्रियापक्ष का निदर्शन । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

05. नरेन्द्र कुमार

**व्योमवती तथा न्यायकन्दली में भूत द्रव्यों के गुण।**

निर्देशक : डॉ. पंकज कुमार मिश्र

Th 27532

सारांश

प्रशस्तपादभाष्य पर रचित 'व्योमवती तथा न्यायकन्दली में भूत द्रव्यों के गुण' विषय पर आधारित प्रस्तुत शोधकार्य में व्योमवती तथा न्यायकन्दली टीका में वर्णित पृथिव्यादि पांच भूत द्रव्यों के रूप, रसादि गुणों पर वर्णित मतों का विश्लेषणात्मक, आलोचनात्मक, तुलनात्मक व वर्णनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस शोधकार्य में आधुनिक आलोचकों के मतों व वैज्ञानिक सिद्धान्तों का भी यथासम्भव समावेश किया गया है।

विषय सूची

1. व्योमवती तथा न्यायकन्दली टीका 2. पदार्थद्रव्य व गुणका स्वरूप 3. पृथिवी द्रव्य के गुण 4. जल द्रव्य के गुण 5. तेज द्रव्य के गुण 6. वायु द्रव्य के गुण 7. आकाश द्रव्य के गुण । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।
06. नागेन्द्र कुमार  
'पाणिनी अष्टाध्यायी में काल नक्षत्र विमर्श ।  
निर्देशक : डॉ. राजीव रंजन  
Th 27533

सारांश

यह कथन अखण्ड सत्य है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड शब्द का ही अनुगमन करता है। शब्द (स्फुट रूपेण) के अतिरिक्त किसी और में ज्ञान प्रकाश का सामर्थ्य नहीं है। अतएव शब्द ही ब्रह्म का परिचायक है। अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम्। विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥ शब्दों से अपशब्दों को अलग करके व्याकरण शास्त्र साधु शब्दों का प्रकाश करता है। यही व्याकरण शब्दों के अनुशासन को दर्शाता है। महर्षि पाणिनि ने शब्दों पर अनुशासन के लिए सूत्रों की रचना की। सूत्र नाम – अल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवाद्रश्वतो मुखम्। अस्तोभमनवद्यज्च सूत्रं सूत्रविदो विदुः॥ सूत्र सन्दर्भित क्लिष्ट अर्थों के अवबोधन के लिए महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य की संरचना की सूत्रों के आशय के संरक्षक के रूप में महाभाष्य प्रमाण शास्त्र के रूप में स्थित है। महाभाष्य नाम- सूत्रार्थो वर्ण्यते यत्र पदैः सूत्रानुसारिभिः। स्वपदानि च वर्ण्यन्ते, भाष्यं भाष्यविदो विदुः॥ महाभाष्यकार कहते हैं – 'न केवलानि चर्चापदानि व्याख्यानम् - वृद्धिः आत् ऐजिति, किं तर्हि उदाहरणम्, प्रत्युदाहरणं वाक्याध्याहार इत्येतत्समुदितं व्याख्यानं भवतीति।' ये काल विषयक निर्देश को व्याख्यायित करते हैं। इनमें काल विभाग अनन्य अंग हैं। काल व नक्षत्र पाणिनी अष्टाध्यायी में अगणित सूत्रों में काल और नक्षत्रों से सम्बन्धित सूत्र उल्लिखित हैं। नक्षत्र काल की व्याख्या पाणिनि से पूर्व काल से काल संज्ञान हेतु मुहुर्त के लिए प्रचलित हैं। इस कारण से नक्षत्रों का ऐतिहासिक महत्त्व ज्योतिष की दृष्टि से और काल समय की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है। ज्योतिष विज्ञान का उद्भव कहाँ और कब हुआ तथा किसने किया यह कहने में सभी असमर्थ हैं। अपितु ज्योतिष शास्त्र की प्राचीनता निःसन्देह असंदिग्ध है। विभिन्न प्राचीन और आधुनिक इतिहासों से यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि वेद सबसे प्राचीन और अपौरुषेय हैं। वेद के छः अंग हैं

- 1. व्याकरण, 2. ज्योतिष, 3. निरुक्त, 4. कल्प, 5. शिक्षा और 6. छन्द। इन्हें क्रमशः वेद रूपी पुरुष का मुख, नेत्र, कान, हाथ, नासिका और पैर माना गया है – शब्दशास्त्रं मुखं ज्योतिषं चक्षुषो श्रोत्रमुक्तं निरुक्तं च कल्पं करौ। या तु शिक्षास्य वेदस्य सा नासिका पादपदमद्वयं छन्द आद्यैर्बुधैः॥ अन्यान्य अंगो का अपना महत्त्व होते हुए भी नेत्रों का महत्त्व शरीर में सर्वोपरि ही माना जाता है, क्योंकि अन्य सभी अंगो से समन्वित होते हुए नेत्रहीन प्राणी के लिए सभी कुछ अन्धकार युक्त होने से व्यर्थ ही होता है। उसी प्रकार सभी शात्रों का ज्ञान होते हुए भी ज्योतिष के ज्ञान के बिना मानव का सम्पूर्ण जीवन और भविष्य अंधकारमय रहता है, इसलिए वेद रूपी पुरुष का नेत्र होने से ज्योतिष शास्त्र सभी अंगो में उत्तम है, ऐसी मान्यता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध “पाणिनि अष्टाध्यायी में काल नक्षत्र विमर्श” मुख्य रूप से महर्षि पाणिनि के द्वारा रचित अष्टाध्यायी में काल नक्षत्र वाची सूत्रों पर आधारित है। इसके अतिरिक्त यथावसर अन्य शोध प्रमाण सामग्री का भी प्रयोग उक्त शोधप्रबन्ध में किया गया है। व्याकरण शास्त्र के अनुसार काल नक्षत्र की परिभाषा महाभाष्य में निहित इष्टार्थ और न्याय वैशेषिक मीमांसा आदि दर्शनों से काल की परिभाषा का उपयोग इस शोध में किया गया है। नागेश भट्ट प्रसिद्ध महावैयाकरण के अनुसार काल की व्याख्या का शोध में प्रतिपादन किया गया है।

### विषय सूची

1. वेद एवं वेदांग का स्वरूप 2. व्याकरण में काल की अवधारणा 3. माहेश्वर सूत्रों का उद्भव और विकास 4. पाणिनि के मत में काल 5. वैदिक सात्यि में काल एवं नक्षत्र तत्व 6. ज्योतिष के अनुसार काल विवेचन। निष्कर्ष। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

07. पाण्डेय (मिथिलेश कुमार)  
शिवप्रसाद भट्टाचार्य का संस्कृत काव्यशास्त्र के योगदान ।  
निर्देशक : प्रो. प्रदीप्त कुमार पण्डा  
Th 27537

### सारांश

आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की परम्परा में शिवप्रसादभट्टाचार्य का नाम प्रमुख है। इन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र के लिए एक नया आयाम प्रस्तुत किया है। शिवप्रसादभट्टाचार्य का जन्म 10 नवम्बर 1889 ई० में बंगाल ( कोलकाता ) में हुआ। ये बंगाल में संस्कृत कॉलेज में प्रोफेसर थे। इन्होंने बंगाली, अंग्रेजी तथा संस्कृत भाषा में अनेक रचनाएँ की हैं। ग्रंथों की रचना करने के अतिरिक्त इन्होंने कई ग्रंथों पर टीकाएँ, टिप्पणियाँ एवम् संपादन कार्य भी किए हैं। बंगाली में 'रविन्द्र साहित्य पालि-प्राकृत', अंग्रेजी में 'Religious Practices of Hindus' 1953 ई० तथा संस्कृत में उत्तराखण्ड यात्रा ( कविता ) 1943 ई०, कविकर्णपूर कृत अलंकारकौस्तुभ पर मौक्तावली टीका, 1919-26 ई०, काव्यप्रकाश पर श्रीधर कृत विवेक टीका का सम्पादन, काव्यप्रकाश पर ही चण्डीदास कृत दीपिका टीका का सम्पादन, 1933 ई०, चण्डीदास कृत ध्वनिसिद्धान्तसंग्रह का सम्पादन, चण्डीदास कृत साहित्यदर्पण पर टिप्पणीकर्ता के रूप में शिवप्रसाद भट्टाचार्य ने कार्य किए हैं। Studies in Indian Poetics तथा Jottings on Sanskrit Metrics शिवप्रसाद भट्टाचार्य की काव्यशास्त्र सम्बन्धी प्रमुख रचनाएँ हैं।

जिनमें प्राचीन कवियों के पारम्परिक विचारों की उपयोगिता को भावी शोधार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। शिवप्रसाद भट्टाचार्य ने रस, गुण, दोष, रीति, अलंकार आदि विषयों सम्बन्धी समीक्षा एवं चर्चा की है। इन्होंने काश्मीरी शैव दर्शन, बौद्धसिद्धान्त तथा वैष्णव दर्शन के संदर्भ में अलंकारशास्त्र सम्बन्धी आधुनिक दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में विचार प्रस्तुत किए हैं। काव्य की परिभाषा, शब्दशक्तिविमर्श, ध्वनिसिद्धान्त तथा छन्द प्रयोग से सम्बन्धित अनेक विषयों पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। शिवप्रसाद भट्टाचार्य का प्रमुख कार्य काव्यप्रकाश पर लिखित टीकाओं का सम्पादन करना है। जिनमें सम्पादन करते समय इन्होंने प्रमुख व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ दी हैं। शिवप्रसाद भट्टाचार्य ने प्रमुख अलंकारशास्त्र सम्बन्धी अनेक लेख विभिन्न शोध पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हुए हैं, इनका संकलन सन्दर्भग्रन्थ सूची में संलग्न हैं। शिवप्रसाद भट्टाचार्य एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल ( कलकत्ता ) द्वारा प्रकाशित तथा सम्पादित अनेक काव्यशास्त्र-सम्बन्धी ग्रंथों के संपादक के रूप में रहे हैं। इस प्रकार शिवप्रसाद भट्टाचार्य का संस्कृत काव्यशास्त्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

### विषय सूची

1. शिवप्रसाद भट्टाचार्य का व्यक्तित्व एवं कृतित्व
2. काव्यशास्त्रीय ग्रंथ अलंकारकौस्तुभ प्रणीत मौक्तिकावली टिप्पणी एवं उसका काव्यशास्त्र को योगदान
3. ध्वनि चिंतन : सिद्धान्त एवं समालोचना
4. रस चिंतन : सिद्धान्त एवं समालोचना
5. अलंकार चिंतन : सिद्धान्त एवं समालोचना
6. काव्यशास्त्र के संदर्भ में शिव प्रसाद भट्टाचार्य की नवीन दृष्टि। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

08. पोखेल (सागर)

नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का भाषाशास्त्रीय अध्ययन : पंचम शताब्दी उत्तरार्ध से उष्टम शताब्दी पूर्वार्ध के सन्दर्भ में ।

निर्देशक : डॉ. उमाशंकर एवं डॉ. सुमिता त्रिपाठी

Th 27538

### सारांश

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध छ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय के अन्तर्गत अभिलेखों का स्वरूप, नेपाल के अभिलेखों की अध्ययन की पृष्ठभूमि, अभिलेखों का भाषाशास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता एवं लिच्छविकालीन नेपाल के आजतक प्राप्त अभिलेखों का विवरण राजाओं के अनुसार विभाजन तथा अभिलेखों की लिपि, भाषा तथा वर्णविषय को दर्शाया गया है। शोधप्रबन्ध का दूसरा अध्याय ध्वनिविज्ञान से सम्बन्धित विषयों का प्रतिपादन करता है। इसमें प्राचीन नेपाल में संस्कृत भाषा के ध्वनियों का किस रूप में विकास था। स्वर और व्यंजनों के आधार पर प्रत्येक वर्ण को स्वतंत्र रूप में दिखाया गया है। इसी प्रकार अनुस्वार, विसर्ग तथा परस्पर वर्णों में अभिनेता दर्शाने के बाद ध्वनि परिवर्तन से संबंधित विषयों का विवेचन किया गया है। इसमें आगम, आदेश, समीकरण, विसमीकरण, मूर्धन्यीकरण आदि ध्वनियों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर विचारपूर्वक सोदाहरण विश्लेषण किया गया है। तृतीय अध्याय में पदवैज्ञानिक अध्ययन को प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में अध्ययन से को दो रूपों में विभक्त कर शब्द संरचनात्मक तथा रूप सं

रचनात्मक दृष्टि से अलग-अलग विस्तृत सामग्रियों का प्रतिपादन करने के पश्चात् व्याकरणिक कोटियां (क्रिया, काल, अव्यय, निपात, सर्वनाम आदि पर विस्तृत विवेचना किया गया है। शोध प्रबन्ध का चतुर्थ अध्याय वाक्यविज्ञान विषय सामग्री से परिपूर्ण है। इसमें वाक्यविज्ञान के स्वरूप का प्रतिपादन करने के पश्चात् वाक्यविज्ञान के क्षेत्र को दर्शाया गया है तथा संरचनात्मक दृष्टि से प्राचीन नेपाल के अभिलेखों के वाक्यों को दर्शाया गया है। तत्पश्चात् वाक्यों का स्वरूप एवं अभिलेखों में वाच्य को किस प्रकार से प्रयोग किया गया है इसको दर्शाकर आकृतिपरक, रचनापरक तथा अर्थपरक आधार पर वाक्यों का विभाजन कर उनका सोदाहरण विवेचन किया गया है। इसी अध्याय में कारक संगतिकरण तथा भाषा का भाव तथा कला पक्ष को भी दर्शाया गया है। इस अध्याय के अन्तिम विभाग में अभिलेखों में लोकोक्तियां तथा अभिलेखों में सकारण तथा अकारण वाक्यों की पुनरावृत्तिकरण को भी दिखाया गया है। शोधप्रबन्ध का पञ्चम अध्याय अर्थवैज्ञानिक अध्ययन से समन्वित है। जिसमें शोधकर्ता द्वारा विभिन्न आधार पर हुए अर्थ परिवर्तन पर अनेक उपशीर्षकों को रखकर ऐतिहासिक तथा वर्णनात्मक दृष्टि से विचार प्रस्तुत किया है। सर्वप्रथम कर से सम्बन्धित शब्दावली तथा प्रशासनिक शब्दावली दर्शाकर सम्मानसूचक शब्दावली का तथा संस्कृत साहित्य में अप्रचलित शब्दों की परिभाषाएं भी शोधकर्ता द्वारा इसी अध्याय में प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय के अंत में संस्कृत साहित्य में अल्पा प्रचलित तथा लिखवी कालीन इतिहास में हुए अर्थ विसंगतियों का भी प्रमाण सहित पुष्ट किया गया है। शोध प्रबन्ध का अन्तिम अध्याय चार विषयों को प्रस्तुत करता है। इस अध्याय में सर्वप्रथम पाणिनीय व्याकरण से असंगत शब्दों का विवरण विस्तार से दर्शाया गया है। इस अध्याय के दूसरे शीर्षक में शोधकर्ता द्वारा शैली विज्ञान शीर्षक के अन्तर्गत अभिलेखों को काव्यशास्त्रीय सन्दर्भ जोड़कर शब्दचयन, रस, छन्द, अलंकार आदि विषयों का उदाहरणपूर्वक प्रस्तुत किया है। इसी अध्याय के तीसरे शीर्षक के अन्तर्गत वैदिक एवं लौकिक संस्कृत के मध्य सोपान के रूप में विद्यमान प्राकृत भाषा के प्रभाव को दर्शाया है।

### विषय सूची

1. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का स्वरूप तथा भाषाशास्त्र एवं अभिलेखों का सम्बन्ध 2. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का ध्वनि वैज्ञानिक अध्ययन 3. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का पद - वैज्ञानिक अध्ययन 4. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का वाक्य - वैज्ञानिक अध्ययन 5. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों का अर्थ वैज्ञानिक अध्ययन 6. नेपाल के संस्कृत अभिलेखों में अपाणिनीय प्रयोग, शैली विज्ञान एवं प्राकृत/ किराँत भाषाओं का प्रभाव । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट। अभिलेखों का संस्कृत पाठ्यभाग। प्लेट्स।

09. भट्ट (रघुनाथ)

**अंशुमद्भेद का समीक्षात्मक अध्ययन (षड्विंशपटल पर्यन्त)।**

निर्देशक : डॉ. उमाशंकर

Th 27539



प्रस्तुत शोधकार्य अंशुमद्भेद के आरम्भिक षड्विंशति पटलों का समीक्षात्मक अध्ययन है। इस शोधकार्य में आहत्य चार अध्याय हैं। प्रथम अध्याय भारतीय वास्तुशास्त्र का परिचय है। इस अध्याय में वास्तु का अर्थ, उद्देश्य, मूलभूततत्त्व, वास्तुपदविन्यास, दिक्साधन, मानविचार आयादि षड्वर्ग विचार का वर्णन है। परिचयात्मक इस अध्याय में उक्त सभी विषयों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है। द्वितीय अध्याय भारतीय वास्तुशास्त्र की ग्रन्थपरम्परा एवं अंशुमद्भेद है। इस अध्याय में मुख्यतः दो वर्ण्य विषय हैं- प्रथम वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थों का सम्पादन एवं शोधकार्य है। इसमें द्रविड और नागरपरम्परा के प्रमुख ग्रन्थों का परिचय पृथक्-पृथक् दिया गया है तथा उन प्रमुख ग्रन्थों की प्राचीन तथा अर्वाचीन व्याख्याओं का उल्लेख भी है। द्वितीय अंशुमद्भेद एवं उसके प्रणेता महर्षि कश्यप का संक्षिप्त परिचय, पाण्डुलिपियों में पाठसम्पादन की चुनौतियां तथा अङ्गीकृत शोधप्रविधि और शोधकार्य के लिए स्वीकृत मातृकाओं का परिचय है। तृतीय अध्याय अंशुमद्भेद के षड्विंशति पटलों का समीक्षात्मक पाठ सम्पादन है। इस अध्याय में अंशुमद्भेद के आरम्भिक षड्विंशति पटलों पर सम्प्राप्त मातृकाओं के आधार पर शुद्धतम पाठ निर्धारण किया गया है। स्वीकृत पाठ को श्लोक के रूप में दिया गया है तथा उससे इतर मातृकाओं के भिन्न पाठ को टिप्पणी में प्रदर्शित है, उदाहरणार्थ - शशिखण्डधरं देवं सर्वलोकैकनाथम्। महेन्द्रमध्यगं शान्तं पार्वतीसहितं परम्॥ “क” मातृका का यह स्वीकृत पाठ ऊपर श्लोक में दिया गया है तथा अन्य मातृकाओं में प्राप्त भिन्न पाठ या पद “ख” एवं “ग” मातृका में “महादेवं शशिधरं” तथा “घ” मातृका में “शशिधरमहादेवं” को टिप्पणी में दिया गया है। शोधप्रबन्ध की भाषा हिन्दी होने के कारण प्रकरणानुसार प्रत्येक पटल का नाम हिन्दी में ही उल्लिखित है। चतुर्थ अध्याय की संज्ञा अंशुमद्भेदस्थ सम्पादित षड्विंश पटलों की समीक्षा है।

### विषय सूची

1. भारतीय वास्तुशास्त्र एक परिचय 2. वास्तुशास्त्र की ग्रन्थ परम्परा एवं अंशुमद्भेद 3. अंशुमद्भेद के षड्विंश पटलों का समीक्षात्मकपाठ सम्पादन 4. अंशुमद्भेदस्थ सम्पादित षड्विंश पटलों की समीक्षा 5. स्फोट-निरूपण 6. धात्वर्थ एवं लकार-निरूपण 7. कारकार्थ-निरूपण 8. वृत्तियों का विश्लेषण। उपसंहार। परिशिष्ट (क)। परिशिष्ट (ख)। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

10. भट्ट (संजय दत्त)

**धरानन्दकृतायाः सुधा-नाम्न्याश्चित्रमीमांसाटीकायाः समीक्षात्मकमध्ययनम्।**

निर्देशक : प्रो. भारतन्दु पाण्डेयः

Th 27908

### सारांश

शोधप्रबन्धोऽयं पञ्चाध्यायेषु विभक्तोऽस्ति । येषां विवरणमधोलिखितमस्ति- “प्रथमोऽध्यायः- काव्यस्वरूपम्: सामान्यं तद्विशेषाश्च” अध्यायेऽस्मिन् काव्यसामान्यलक्षणम्, “ध्वनिकाव्यम्, गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्यम्, चित्रकाव्यम्” इति काव्यभेदानाञ्चोपरि समीक्षात्मको विचारो वर्तते । शोधप्रबन्धस्य प्रथमोऽध्याये काव्यं तदभेदानाञ्चोपरि विचारं कृत्वा द्वितीय-तृतीय-चतुर्थे इतीमे

अध्यायत्रयेषु उपमादि द्वादश अर्थचित्रालङ्काराणां समीक्षा कृतास्ति। द्वितीयोध्यायस्याभिधानम्- “सादृश्यमूलका अलङ्काराः” इत्यस्ति अस्मिन् “उपमा-उपमेयोपमा-अनन्वय-स्मरणम्” इति चतुर्णां सादृश्य मूलकानामलङ्काराणामुपरि विशदविचारविमर्शो वर्तते। तृतीयोध्यायस्याभिधानम्- “आरोपमूलका अभेदप्रधाना अलङ्काराः” अस्मिन् रूपक-परिणाम-ससन्देह-भ्रान्तिमान्-उल्लेख-अपह्नुति” इतीमे अलङ्काराणां प्रतिपादनमस्ति एवं चतुर्थोध्यायः “अध्यवसायमूलकौ अभेदप्रधानौ अलङ्कारौ” इत्यभिधानेनास्ति। अस्मिन् “उत्प्रेक्षा-अतिशयोक्तिः” अनयोः समीक्षा वर्तते। एवं पञ्चमोध्यायः- टीकात्वनिकषो सुधायाः परीक्षा इति नाम्नास्ति। एवं प्रकारेण सर्वेषां विषयाणां समीक्षात्मकं चिन्तनं विधायान्ते “उपसंहारः” इत्यनेन शोध-प्रबन्धोऽयं समाप्तिं याति।

### विषय सूची

1. भूमिका 2. काव्यस्वरूपम् : काव्यसामान्यं तद्विशेषाश्च 3. भेदाभेदतुल्यप्रधानाः सादृश्यमूलका अलङ्काराः 4. अभेदाप्रधाना आरोपमूलकाः सादृश्यगर्भा अलङ्काराः 5. अभेदप्रधानौ अध्यवसायमूलकौ सादृश्यगर्भौ अलङ्कारौ 6. टीकात्वनिकषे सुधायाः परीक्षा। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

11. मिश्र (अतुल कुमार)

**अभिनवभारती में निरूपित विविध शास्त्रीय सन्दर्भ “एक समीक्षात्मक अध्ययन”।**

निर्देशक : प्रो. रंजन कुमार त्रिपाठी

Th 27541

### सारांश

अभिनवभारती में निरूपित विविध शास्त्रीय सन्दर्भ : एक समीक्षात्मक अध्ययन उपसंहार यह शोध प्रबन्ध अभिनवभारती ग्रंथ में निहित विविध शास्त्रीय सन्दर्भों का गहन अध्ययन व विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अभिनवभारती नाट्यशास्त्र पर एक महत्वपूर्ण टीकाग्रन्थ है और इसमें नाट्यशास्त्र के साथ-साथ काव्यशास्त्र, दर्शनशास्त्र, संगीतशास्त्र और अन्य शास्त्रों के सन्दर्भ भी विस्तार से वर्णित हैं। इस शोध का उद्देश्य इन सन्दर्भों की गहराई से जाँच करना और अभिनवभारती के माध्यम से भारतीय साहित्य और कला के इतिहास में इन शास्त्रों के आपसी सह-संबंधों को समझना है। मुख्य निष्कर्षः 1. नाट्यशास्त्र एवं अभिनवभारती: अभिनवभारती नाट्यशास्त्र के भरतमुनि के मूल सिद्धांतों पर आधारित है। अभिनवगुप्त ने नाट्यशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों जैसे रस, भाव, अलंकार, गुण-दोष आदि पर अपनी विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है। उन्होंने नाट्यशास्त्र को दर्शनशास्त्र, काव्यशास्त्र और अन्य शास्त्रों से जोड़कर एक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। 2. काव्यशास्त्रीय सन्दर्भ: अभिनवभारती में काव्यशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों जैसे रस, अलंकार, गुण-दोष आदि पर व्यापक व्याख्या उपलब्ध है। अभिनवगुप्त ने रस सिद्धांत पर अपनी मौलिक व्याख्या प्रस्तुत की है और रसों की संख्या और उनके स्वरूप पर अन्य आचार्यों के मतों का विस्तृत विश्लेषण किया है। अलंकार और गुण-दोष के सिद्धांतों पर भी अभिनवगुप्त ने अपनी मूलभूत व्याख्या प्रस्तुत की है और अन्य आचार्यों के मतों से तुलना की है। 3. दर्शनशास्त्रीय सन्दर्भ: अभिनवभारती में काश्मीर शैव दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता

है। अभिनवगुप्त ने नाट्यशास्त्र के सिद्धांतों को समझाने के लिए काश्मीर शैव दर्शन के सिद्धांतों का प्रयोग किया है। इसके अलावा, उन्होंने अन्य दर्शनों जैसे सांख्य, योग, वेदांत आदि के सिद्धांतों का भी उल्लेख किया है। 4. संगीतशास्त्रीय सन्दर्भ: अभिनवभारती में संगीतशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों जैसे स्वर, राग, ताल आदि पर भी चर्चा की गई है। अभिनवगुप्त ने संगीत को नाट्य के एक अंग के रूप में देखा है और संगीत के माध्यम से नाट्य के विभिन्न भावों को व्यक्त करने के युक्तियों पर विस्तृत चर्चा की है। 5. अन्य शास्त्रीय सन्दर्भ: अभिनवभारती में नाट्यशास्त्र के साथ-साथ अन्य शास्त्रों जैसे व्याकरण, छंदशास्त्र, अलंकारशास्त्र आदि के सन्दर्भ भी मिलते हैं। अभिनवगुप्त ने इन शास्त्रों के सिद्धांतों का प्रयोग नाट्यशास्त्र को समझाने व अपने पक्ष को और अधिक पुष्ट करने के लिए किया है। निष्कर्ष: अतः यह स्पष्ट रूप से व्यक्त है कि अभिनवभारती एक बहुमुखी ग्रंथ है जिसमें नाट्यशास्त्र के साथ-साथ विभिन्न शास्त्रों के सिद्धांतों का समन्वय किया गया है। अभिनवभारती का अध्ययन हमें भारतीय साहित्य और कला के इतिहास में विभिन्न शास्त्रों के आपसी संबंधों को समझने में मदद करता है। अभिनवभारती नाट्यशास्त्र के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है और इसका अध्ययन नाट्यकारों, अभिनेताओं, निर्देशकों और नाट्य के अन्य कलाकारों के लिए अत्यंत उपयोगी हो सकता है।

#### विषय सूची

1. भूमिका 2. नाट्यशास्त्र एवं अभिनवभारती : एक परिचय 3. अभिनवभारती में निरूपित काव्यशास्त्रीय सन्दर्भ 4. अभिनवभारती में निरूपित दर्शनशास्त्रीय सन्दर्भ 5. अभिनवभारती में निरूपित संगीत शास्त्रीय सन्दर्भ 6. अभिनवभारती में निरूपित अन्य शास्त्रीय सन्दर्भ। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

12. मीना (रामदुलारी)

**शांकरवेदान्तपरम्परा में पातञ्जलयोग का स्वरूप।**

निर्देशिका : डॉ. मोनिका कुँवर राठौर

Th 27542

#### सारांश

शांकरवेदान्तपरम्परा में पातञ्जलयोग का स्वरूप के अन्तर्गत सर्वप्रथम योग की ऐतिहासिकता का उल्लेख पर्याप्त है। योग की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है और इसकी उत्पत्ति हजारों वर्ष पहले हुई थी। प्राचीनतम धर्मों या आस्थाओं के जन्म लेने से काफी पहले योग का जन्म हो चुका था। वैदिक ऋषि-मुनियों से ही योग का प्रारम्भ माना जाता है। योग से सम्बन्धित प्राचीन ऐतिहासिक साक्ष्यों का वर्णन इस अध्याय में किया गया है। इस अध्याय में वेदों से लेकर आधुनिक काल में योग का उल्लेख वर्णित है। प्रथम अध्याय में योग की ऐतिहासिकता का वर्णन करने के पर्यन्त इस अध्याय में पातञ्जल दर्शन में योग का स्वरूप वर्णित है। पातञ्जल दर्शन में योग शब्द युज् धातु में घञ् प्रत्यय लगने से निष्पन्न होता है। 'चित्तवृत्तिनिरोध' रूपी समाधि के अर्थ में ही पातञ्जल योग का ग्रहण किया गया है। यह योग शब्द अन्य अर्थों में प्रयुक्त नहीं माना जा सकता है, क्योंकि पातञ्जल 'योग' संयोग रूप न होकर वियोगफल ही है अर्थात् कैवल्य देने वाला होता है। समाधि रूप साध्य तक पहुँचने हेतु अष्टांग योग

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का उल्लेख बताया गया है। योग की ऐतिहासिकता एवं पातञ्जलदर्शन में योग का स्वरूप का वर्णन करने के उपरान्त पातञ्जलयोग एवं अद्वैत वेदान्त की तत्त्वमीमांसा का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अद्वैत एवं योग दर्शन का तात्त्विक दृष्टि से अध्ययन करने पर मतवैभिन्न्य प्राप्त होता है। शाङ्कर वेदान्त सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का मूल कारण एक तत्त्व (ब्रह्म) एवं योग दर्शन (प्रकृति-पुरुष) दो तत्त्वों को मानता है। पातञ्जलयोग एवं अद्वैत वेदान्त की तत्त्वमीमांसा का तुलनात्मक अध्ययन करने के पर्यन्त इस अध्याय में शाङ्कर वेदान्त की अद्वैत परम्परा में योग का स्वरूप एवं अनुप्रयोग का वर्णन है। जब हम आचार्य शाङ्कर की शिष्य परम्परा को देखते हैं तो हमें उनके द्वारा विरचित ग्रन्थों के अध्ययन से अनुभव होता है कि परवर्ती आचार्यों द्वारा अष्टांग योग को साधन रूप में पूर्ण स्वीकृति प्राप्त है। अतएव स्पष्ट है कि अद्वैत वेदान्त में मोक्ष प्राप्ति के लिए पातञ्जल योग में वर्णित योग साधनों की पूर्ण आवश्यकता दिखाई देती है। शङ्कराचार्य विरचित स्तोत्रग्रन्थों में 'दक्षिणामूर्तिस्तोत्र' पर सुरेश्वराचार्यविरचित मानसोल्लास नामक वार्तिक प्राप्त होता है। दक्षिणामूर्ति स्तोत्र के श्लोक संख्या 9 पर प्राप्त 'मानसोल्लास' में अष्टांग योग का स्वरूप एवं अष्टांग योग के अनुष्ठान से प्राप्त फल को निरूपित किया गया है। अद्वैत वेदान्त के प्रकरण ग्रन्थ वेदान्तसार के रचयिता आचार्य सदानन्द यति के द्वारा परमतत्त्व (ब्रह्म) की प्राप्ति के साधन रूप में अष्टांग योग को पूर्णतया स्वीकृति प्रदान की गई है। श्रीमद्भगवद्गीता पर अद्वैत परम्परा के आचार्य मधुसूदन सरस्वती विरचित गूढार्थदीपिका टीका में पूर्णतया अष्टांग योग का स्वरूप उपलब्ध होता है। योगदर्शन द्वारा चित्तवृत्ति-निरोध हेतु स्वीकृत अभ्यास एवं वैराग्य का स्वरूप श्रीमद्भगवद्गीता शाङ्करभाष्य एवं शंकराचार्य विरचित विवेकचूडामणि में प्राप्त होता है।

### विषय सूची

1. योग की ऐतिहासिकता 2. पातञ्जल दर्शन में योग का स्वरूप 3. पातञ्जल योग एवं अद्वैत वेदान्त की तत्त्वमीमांसा का तुलनात्मक दर्शन 4. शाङ्कर वेदान्त की अद्वैत परम्परा में योग का स्वरूप एवं अनुप्रयोग। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

### 13. लुहार (राम करण)

**पातञ्जलयोग एवं हठयोग साधना का तुलनात्मक अध्ययन (शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के सन्दर्भ में) ।**

निर्देशक : प्रो. अखिलेश कुमार दुबे

Th 27546

### सारांश

भारतीय ज्ञान परम्परा का परम लक्ष्य सदैव चिदानन्द की प्राप्ति रहा है। इस संसार के समस्त प्राणियों में मनुष्य सबसे बुद्धिमान प्राणी माना गया है जो परमात्मा के द्वारा की गई सबसे अनुपम रचना है। सांसारिक दुःखों से मुक्ति प्राप्त करने की जिज्ञासा के फलस्वरूप अनेक दार्शनिक चिन्तन की धाराएँ विकसित हुई हैं। इनका मूलस्रोत वेद और उपनिषद् माने गये हैं। इन सभी चिन्तन धाराओं में सैद्धान्तिक पक्ष की अपेक्षा प्रायोगिक (क्रियात्मक) पक्ष को अधिक महत्त्व दिया गया है। प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध को मुख्य रूप से पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। अन्त में उपसंहार एवं सन्दर्भ ग्रन्थसूची भी संलग्न की गई है। प्रथम अध्याय में प्राच्यविद्या 'योग' की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विवेचन किया गया है। अन्त में योगविद्या का आधुनिक एवं समसामयिक काल में जो प्रचार और प्रसार हो रहा है, इसकी प्रमुख योग विभूतियों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। द्वितीय अध्याय में योगसाधना का अर्थ एवं इसका जीवन में उद्देश्य बताया गया है। अन्त में पातञ्जलयोग एवं हठयोग में साम्यता और वैषम्यता के पक्षों का सारणीबद्ध क्रम में विवेचन किया गया है। तृतीय अध्याय में मानव स्वास्थ्य की सबसे आधारभूत आवश्यकता 'आहार' है। योग एवं आयुर्वेद आदि ग्रन्थों के आधार पर आहार की अवधारणा एवं इसके महत्व पर प्रकाश डाला गया है। अन्त में मानव जीवन का आदर्श अनुशासन 'आयुर्वेदिक स्वस्थवृत्त' का विस्तार से विवेचन किया है। चतुर्थ अध्याय में मानव शरीर का विभिन्न शास्त्रों को आधार बनाकर विवेचन करते हुए इसका महत्व बतलाया गया है। अन्त में आधुनिक युग में दैनिक योगसाधना की सबसे आदर्श और सरल पद्धति 'सूर्यनमस्कार' का विस्तार से विवेचन किया गया है। पञ्चम अध्याय में हमारी इन्द्रियों के अधिष्ठाता अन्तःकरण मन की संकल्पना का निरूपण एवं महत्व का वर्णन किया गया है। अन्त में विभिन्न शास्त्रों के आधार पर मानव व्यक्तित्व का यथामति निरूपण किया गया है।

### विषय सूची

1. योग का स्वरूप एवं प्रमुख ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय 2. पातञ्जलयोग एवं हठयोग में साधना की प्रक्रिया 3. योग साधना में आहार एवं स्वास्थ्य विवेचन 4. शारीरिक स्वास्थ्य के लिए पातञ्जलयोग एवं हठयोगिक साधना 5. पातञ्जलयोग एवं हठयोग साधना द्वारा मानसिक महत्व। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रन्थसूची।

14. RAHA (Paromita)  
**A Critical Study of Vijayinī-Mahākāvya.**  
 Supervisor: Dr. Shraddha Shukla  
 Th 27544

Vijayinī- Mahākāvya is a modern Sanskrit epic. This epic is written by great poet Śrīśvara Vidyālaṅkāra. The poet dedicated his composition to the maharaja of Cooch Behar Sir Nripendra Narayan Bhup Bahadoor. This epic was published in 1902 from Girisa- vidyaratna press, Calcutta. Śrīśvara Vidyālaṅkāra was born in Rangpur District which is now in Bangladesh. His father's name is Kshitishvara Bhattacharya and his time is second half is 19th century and the beginning of 20th century. Vijayinī-mahākāvya is based on the life of Queen Victoria. It contains 12 cantos and 940 verses. This epic is poetically very rich. The entire epic composed in 24 metres and three kinds of Alankaras such as Śabdālaṅkāra, Arthālaṅkāra and Ubhayālaṅkāra. In this epic main Rasa or Sentiment is Pathetic sentiment (करुण-रस). This thesis has been presented in six chapters • The First chapter of this thesis is Introduction. Nature of Sanskrit Mahākāvya, Tradition of Ancient Sanskrit Mahākāvya, Tradition of Modern Sanskrit Mahākāvya, Śrīśvara Vidyālaṅkāra Bhaṭṭācārya: Person and His Works are discussed in this chapter. • The second chapter is Story of Vijayinī-Mahākāvya. Story of Vijayinī-Mahākāvya According to Cantos, Combination of Story in Five Sandhis, Analysis of Vijayinī-Mahākāvya as Mahākāvya, Analysis of the Story of Vijayinī-Mahākāvya from the Perspective of the Poet are discussed in this chapter. • The third chapter is Characterization and Illustration of Nature in Vijayinī-Mahākāvya. Characterization of the Heroine of Vijayinī-Mahākāvya, other Characters of Vijayinī-Mahākāvya, and Illustration of Nature in Vijayinī-Mahākāvya are discussed in this chapter. • The fourth chapter is Metres and Figure of Speech in Vijayinī-Mahākāvya. • The fifth chapter is Poetic Elements in Vijayinī-Mahākāvya. Rasa or passion, Rīti or diction, Guṇa or excellence and Bhāṣā or language is

discussed in this chapter. • The sixth chapter is Historical Elements in Vijayinī-Mahākāvya. Contemporary Indian Society and British Society, Historical Events are described in this chapter.

### Contents

1. Introduction 2. Story of Vijayinī-Mahākāvya 3. Characterization and Illustration of Nature in Vijayinī-Mahākāvya 4. Metres and Figure of Speech in Vijayinī-Mahākāvya 5. Poetic Elements in Vijayinī-Mahākāvya 6. Historical Elements in Vijayinī-Mahākāvya. Conclusion. Reference.

15. सिंह (सत्यवीर)

**औचित्यसिद्धान्त की दृष्टि से सिन्धुराजवधम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन।**

निर्देशक : प्रो. अजय कुमार झा

Th 27907

### सारांश

शोध-प्रबन्ध के छः अध्यायों में डॉ- गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री प्रणीत 'सिन्धुराजवधम्' महाकाव्य में अन्तर्भूत काव्य-तत्त्वों की औचित्य-सिद्धान्त के अलोक में समीक्षा करने का प्रयास किया गया है। इस दृष्टि से 'सिन्धुराजवध' महाकाव्य का अध्ययन करने से अवगत होता है कि उनकी यह कृति साहित्य की दृष्टि से उच्चकोटि की है। उनकी इस कृति में घटनाओं और वर्णनों की सार्थकता, वर्णनों में स्वाभाविकता, चरित्र-चित्रण में वैयक्तिकता तथा जीवन्तता, कथा-कथन में सहजता, मनोहर शैली, देश, काल तथा समाज आदि का वर्णन, लोकोपकारी सन्देश, मानवतावादी सिद्धान्त, वास्तविकता और रस की परिपुष्टता आदि प्रत्येक पद में अभिलक्षित होती है। रस, अलङ्कार और गुण की औचित्यी उनके महाकाव्य में सर्वत्र विद्यमान है। यद्यपि उनका यह महाकाव्य वीर रस प्रधान महाकाव्य है, तथापि इस महाकाव्य में श्रङ्गार, रौद्र, करुण, भयानक तथा बीभत्स रसों का भी मनोहारी परिपाक हुआ है। इसमें रसों की आस्वाद्यता उनके अनुकूल गुण और अलङ्कार के विधान से तीव्रतर होती जाती है तथा सहृदय पाठक उसमें निमग्न होता जाता है। डॉ- गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री के अलङ्कार विधान को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि वे अलङ्कार योजना में अपने पूर्ववर्ती कवियों का अन्धानुकरण नहीं करते हैं अपितु नवीन कल्पनाओं पर आधारित अलङ्कारों से अपनी रचनाओं का सौन्दर्याभिवर्धन करते हैं। अलङ्कार इनके काव्य के अलङ्करण मात्र नहीं हैं, बल्कि काव्यात्मा रस के पोषक हैं। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का विषय 'औचित्य सिद्धान्त की दृष्टि से सिन्धुराजवधम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन' है। जब हम इस महाकाव्य की औचित्यपरक विवेचना करते हैं तो आचार्य क्षेमेन्द्र द्वारा प्रतिपादित औचित्य-सिद्धान्त के दृष्टिकोण से 'सिन्धुराजवधम्' की सम्पूर्ण कथावस्तु अत्यन्त समृद्ध एवं परिपोषित दिखलाई पड़ती है। आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्यविचारचर्चा में काव्य के जीवित तत्त्व के रूप में औचित्य का प्रतिपादन किया है। यद्यपि आचार्य भरत के नाट्यशास्त्र में औचित्य के मूल बिन्दु दृष्टिगोचर होते हैं जहाँ से प्रेरणा पाकर परवर्ती आचार्यों ने औचित्य या अपने-अपने सिद्धान्तों को समृद्ध एवं परिपोषित कर सम्प्रदाय का

रूप दिया। प्रस्तुत रचना प्रसङ्ग में औचित्य की बात की जाए तो रचना की कथावस्तु में औचित्य तथा अनौचित्य के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं।

### विषय सूची

1. औचित्य सिद्धान्त : उद्भव एवं विकास 2. सिन्धुराजवधम् में भाषागतौचित्य 3. सिन्धुराजवधम् में भाषागतौचित्य 4. सिन्धुराजवधम् में सामाजिकौचित्य 5. सिन्धुराजवधम् में तात्त्विकौचित्य 6. सिन्धुराजवधम् में अनाभिहितौचित्य । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

16. श्वेता

**राघवपाण्डवीयम् का श्लेषपरक अध्ययन: प्रकाश टीका के विशेष संदर्भ में।**

निर्देशिक : डॉ. मोहिनी आर्या

Th 27547

### सारांश

स्वाधिष्ठानाम्बुजरजः पुञ्जपिञ्जरमूर्तये। इच्छाधीनजगत्सृष्टिकर्मणे ब्रह्मणे नमः॥  
राघवपाण्डवीय काव्य में 13 सर्ग हैं। कवि ने सभी सर्गों के अन्तिम श्लोक में 'कामदेव' शब्द का प्रयोग किया है, अतः इस काव्य को 'कामदेवाङ्क' काव्य कहा गया है। कवि ने प्रारम्भ से लेकर अन्त तक रामायण तथा महाभारत दोनों कथानकों का श्लेष की सहायता से एक ही शब्द में निर्वाह किया है। इसी महाकाव्य को आधार बनाकर प्रस्तुत शोधकार्य पूर्ण करने का प्रयास किया है। "राघवपाण्डवीयम् का श्लेषपरक अध्ययन : प्रकाश टीका के विशेष सन्दर्भ में" नामक प्रस्तुत शोधप्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभाजित है। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में ग्रन्थ में प्रयुक्त श्लेष अलंकार पर शोधकार्य किया गया है। प्रत्येक श्लोक में प्रयुक्त श्लेष पदों की एक सूची तैयार की गई है जिसमें पदों को उनके श्लेष के प्रकार से सूचीबद्ध किया है। प्रत्येक अध्याय में दो अथवा तीन सर्गों को लेकर उनमें आए श्लेष पदों को उनके प्रकार एवं वर्णानुक्रम से व्यवस्थित किया है। साथ ही प्रत्येक पद में श्लेष का प्रकार, उसका हेतु एवं उससे सम्बन्धित व्याकरण, निरुक्ति एवं पर्यायवाची भी दर्शाए गए हैं। पदों में प्रयुक्त श्लेष के औचित्य को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है। शोधप्रबन्ध के पाँच अध्यायों के अनुसार महाकाव्य के 13 सर्गों का विभाजन निम्न है- अध्याय सर्ग प्रथम 1, 2 द्वितीय 3, 4, 5 तृतीय 6, 7, 8 चतुर्थ 9, 10, 11 पंचम 12, 13 (प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ में सर्गगत कथा का वर्णन है।) प्रस्तुत शोधकार्य साहित्यशास्त्र के अध्येताओं को नवीन क्षेत्र एवं दृष्टि प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो, ऐसा पूर्ण प्रयास किया गया है। इस शोधकार्य की समीक्षा के अनन्तर आधुनिक कवियों को भी श्लेषपरक काव्य की रचनाओं के निर्माण में प्रेरणा मिलेगी ऐसी आशा है।

### विषय सूची

1. राघवपाण्डवीयम् के प्रथम एवं द्वितीय सर्ग में श्लेष 2. राघवपाण्डवीयम् के तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम सर्ग में श्लेष 3. राघवपाण्डवीयम् के षष्ठ, सप्त एवं अष्टम सर्ग में श्लेष 4. राघवपाण्डवीयम् के नवम, दशम एवं एकादश सर्ग में श्लेष 5. राघवपाण्डवीयम् के द्वादश एवं त्रयोदश सर्ग में श्लेष । उपसंहार। परिशिष्ट । संक्षिप्ताक्षर सूची, विशिष्ट सूक्तियां। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

17. शर्मा (कैलाश चन्द्र)

**ब्रह्मसूत्रभाष्यों में सांख्य-योगमत विमर्श (भक्तिवेदान्त सम्प्रदायों के सन्दर्भ में)।**

निर्देशक : डॉ. अवधेश प्रताप सिंह

Th 27550

*सारांश*

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध छः अध्यायों में विभक्त है, जिसके अन्तर्गत प्रथम अध्याय 'श्रीभाष्य में सांख्य-योगमत विमर्श' में ब्रह्मसूत्र-परिचय, ब्रह्मसूत्रभाष्य-परिचय, भक्तिवेदान्त सम्प्रदाय परम्परा, सांख्य-योग दर्शन का सामान्य परिचय तथा सांख्य-योग दर्शन के सिद्धान्तों को रखकर क्रमशः तार्किक विधाओं के द्वारा रामानुजाचार्य ने स्वमत को प्रतिष्ठित किया है, जिसमें क्रमशः प्रधानकारणवाद, अन्तर्यामित्व, भूतयोनित्व, द्युभ्वायतनता, अक्षरशब्दवाच्यता, अव्यक्तशब्दवाच्यता, अजाशब्दवाच्यता, तत्त्वविषयक अंश, सांख्यस्मृति से वेदान्तसमन्वयविरोध विषयक अंश, योगमत का खण्डन तथा सांख्यसम्मत प्रमाण-सत्कार्यवादादि स्वरूपों का वाद-प्रतिवाद प्रक्रिया के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। द्वितीय अध्याय 'पूर्णप्रज्ञभाष्य में सांख्य-योगमत विमर्श' नामक शीर्षक द्वारा भाष्यकार आचार्य मध्व ने भी श्रीहरि विष्णु को ही सर्वोपरि मानकर सांख्य-योगमत सिद्धान्तों का जिसमें क्रमशः प्रधानकारणवाद, अन्तर्यामित्व, भूतयोनित्व, द्युभ्वायतनता, अक्षरशब्दवाच्यता, अव्यक्तशब्दवाच्यता, अजाशब्दवाच्यता, तत्त्वविषयक अंश, सांख्यस्मृति से वेदान्तसमन्वयविरोध विषयक अंश, योगमत का खण्डन तथा सांख्यसम्मत प्रमाण-सत्कार्यवादादि स्वरूपों का परिहार किया गया है। आचार्य निम्बार्क ने वेदान्तपारिजात नामक भाष्य के द्वारा 'वेदान्तपारिजात में सांख्य-योगमत विमर्श; नामक तृतीय अध्याय में सांख्य-योगदर्शन के सिद्धान्तों का क्रमशः प्रधानकारणवाद, अन्तर्यामित्व, भूतयोनित्व, द्युभ्वायतनता, अक्षरशब्दवाच्यता, अव्यक्तशब्दवाच्यता, अजाशब्दवाच्यता, तत्त्वविषयक अंश, सांख्यस्मृति से वेदान्तसमन्वयविरोध विषयक अंश, योगमत का खण्डन तथा सांख्यसम्मत प्रमाण-सत्कार्यवादादि स्वरूपों का तर्कसङ्गत विश्लेषण किया है। चतुर्थ अध्याय 'अणुभाष्य में सांख्य-योगमत विमर्श' में आचार्य वल्लभ ने तार्किक विवेचना के द्वारा क्रमशः प्रधानकारणवाद, अन्तर्यामित्व, भूतयोनित्व, द्युभ्वायतनता, अक्षरशब्दवाच्यता, अव्यक्तशब्दवाच्यता, अजाशब्दवाच्यता, तत्त्वविषयक अंश, सांख्यस्मृति से वेदान्तसमन्वयविरोध विषयक अंश, योगमत का खण्डन तथा सांख्यसम्मत प्रमाण-सत्कार्यवादादि स्वरूपों का परिहार कर स्वमत को प्रतिष्ठित किया है। पञ्चम अध्याय 'गोविन्दभाष्य में सांख्य-योगमत विमर्श' में आचार्य बलदेव विद्याभूषण ने पूर्ववर्ती आचार्यों की भाँति क्रमशः प्रधानकारणवाद, अन्तर्यामित्व, भूतयोनित्व, द्युभ्वायतनता, अक्षरशब्दवाच्यता, अव्यक्तशब्दवाच्यता, अजाशब्दवाच्यता, तत्त्वविषयक अंश, सांख्यस्मृति से वेदान्तसमन्वयविरोध विषयक अंश, योगमत का खण्डन तथा सांख्यसम्मत प्रमाण-सत्कार्यवादादि स्वरूपों का तर्कसङ्गत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। षष्ठ अध्याय 'ब्रह्मसूत्रभाष्यों में विमृष्ट सांख्य-योगमत का मूल्याङ्कन' में भक्तिवेदान्त सम्प्रदाय के प्रत्येक भाष्य में किए गये विमर्श का मूल्याङ्कन कर अन्त में निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।



### विषय सूची

1. श्रीभाष्य में सांख्य योगमत विमर्श 2. पूर्णप्रज्ञभाष्य में सांख्य - योगमत विमर्श 3. वेदान्तपारिजात में सांख्य योगमत विमर्श 4. अनुभाष्य में सांख्य - योगमत विमर्श 5. गोविन्दभाष्य में सांख्य - योगमत विमर्श 6. ब्रह्मसूत्रभाष्यों में विमृष्ट सांख्य - योगमत का मूल्यांकन। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

18. शर्मा (सीमा)

**प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों का समीक्षात्मक अध्ययन।**

निर्देशक : वेद प्रकाश डिंडोरिया

Th 27906

### सारांश

प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों का समीक्षात्मक अध्ययन Prabodha Kumāra Miśra ke Dūtakāvyaṃ kā samīkṣātmaka adhyayana दिल्ली विश्वविद्यालय की पीएच.डी (संस्कृत) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध शोधनिर्देशक शोधार्थिनी प्रो० वेद प्रकाश डिंडोरिया सीमा शर्मा आचार्य, संस्कृत विभाग दूत के माध्यम से सन्देश-सम्प्रेषण की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक साहित्य से लेकर पुराण साहित्य, यहाँ तक कि लोक-गीतों एवं लोककथा-साहित्य में भी दौत्य प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। दूत के रूप में जड़ एवं चेतन दोनों ही प्रकार के दूतों का समावेश किया गया है, जो कि विरहीजनों की प्रकृतिकृपणता की साक्षी है। दूतकाव्य का लक्षण - आचार्य भामह से लेकर पण्डितराज जगन्नाथ तक किसी भी आचार्य ने अपने ग्रन्थ में दूतकाव्य के लक्षण का निरूपण नहीं किया है। दूतकाव्यों को खण्डकाव्य कहा गया है। आचार्य विश्वनाथ ने अपने ग्रन्थ 'साहित्यदर्पण' के षष्ठ परिच्छेद में खण्डकाव्य के लक्षण का निरूपण किया है। खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारी च। जैसे- मेघदूत, ऋतुसंहार आदि। परन्तु आधुनिक विद्वान् आचार्य रहस विहारी द्विवेदी ने 'साहित्यविमर्श' नामक ग्रन्थ में दूतकाव्य के लक्षण निरूपण किया है। यथा - दूतं कृत्वा निसर्गाङ्गं नरं वा पक्षिणं पशुम्। स्वप्रियं प्रति सन्देशः प्रेष्यते दूतसंज्ञके॥ अवाचोऽव्यक्तवाचोऽपि वर्ण्यतां दूतरूपिणः। ते न यान्तु न सन्देशं प्रियार्थं श्रावयन्त्वह॥ अर्थात् दूतसंज्ञक काव्यों में प्राकृतिक पदार्थ, मनुष्य, पक्षी अथवा पशु को दूत बनाकर अपने प्रिय के प्रति सन्देश भेजा जाता है। वाणीविहीन प्राकृतिक पदार्थ अथवा अव्यक्त वाणी वाले पक्षी अथवा पशु भी दूत के रूप में वर्णन किए जाते हैं। प्रबोध कुमार मिश्र आधुनिक युग के सुप्रसिद्ध कवि हैं। इनका जन्म 18 अक्टूबर, 1943 ई. को उड़िसा के कटक जिले में सरपरा ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम सोमनाथ मिश्र तथा माता का नाम उदिया देवी था। इनको राष्ट्रीय तथा प्रान्तीय स्तर के प्रमुख 19 सम्मान प्राप्त हो चुके हैं, जिनमें प्रमुख रूप से राष्ट्रपति पुरस्कार, उड़िसा साहित्य अकादमी पुरस्कार, कालिदास सम्मान, भारत-भारती पुरस्कार, कविभूषण, संवादकेसरी, वाणीरत्न आदि प्रमुख हैं। इन्होंने संस्कृत तथा उड़िया भाषा में 65 काव्यों की रचना की है। इसी आधार पर इनको 'उत्कलीय कालिदास' कहा जाता है। इनके द्वारा 7 संस्कृत दूतकाव्यों की रचना की गयी।

### विषय सूची

1. संस्कृत दूतकाव्य - परम्परा एवं 'उत्कलीय कालिदास' प्रबोध कुमार मिश्र 2. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों में आदिवाक्य, दौत्ययोजन, ब्रज्याङ्गादेशना, प्राप्यदेशवर्णन, मन्दिराभिज्ञापन एवं सम्प्रेष्य-सन्निवेश्य-विमर्श 3. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतावासों में अन्यरूपत्वापत्तिसम्भावना, अवस्थाविकल्प, वचनारम्भ, सन्देशवचन, अभिज्ञानदान एवं प्रमेयपरिनिष्ठापन 4. प्रबोध कुमार मिश्र के काव्यों में रस तथा भाव 5. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों में अलंकार 6. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों में छन्द-योजना 7. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों में दार्शनिक तत्व 8. प्रबोध कुमार मिश्र के दूतकाव्यों में राष्ट्रिय चेतना। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

19. शिवानी

#### काव्यप्रकाश की प्रमुख टीकाओं के आलोक में काव्यदोष।

निर्देशक : प्रो. वेद प्रकाश डिंडोयिया

Th 27552

#### सारांश

संस्कृत काव्यशास्त्र में आचार्य मम्मट को काव्यशास्त्र मर्मज्ञ के मानक के रूप में विभिन्न आचार्यों द्वारा स्वीकार किया गया है। मम्मट के पाण्डित्य की कसौटी और मौलिकता और मौलिकता के दर्शन करने से तो उनके सप्तम उल्लास में प्रतिपादित दोषविचार को देखना चाहिए। इसी अक्रम में प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में मम्मट के दोष-विचार पर विस्तृत रूप से मीमांसा की गई है। चूंकि मम्मट की शैली सूत्रात्मक है, अतः उनके विस्तृत रूप से अर्थावबोधन के लिए हमें प्राचीन टीकाकारों की दृष्टि का भी आलोचन करना पड़ता है। मम्मट के टीकाकारों में जहां एक ओर माणिकचन्द्र, रुच्यक, श्रीधर, महेश्वर इत्यादि टीकाकार उनके प्रबल समर्थक के रूप में आते हैं, वहीं काव्यप्रकाशखण्डनकार सिद्धिचन्द्रगणि जैसे अनेक समालोचक भी हैं। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में कालक्रमानुसार टीकाकारों के मतों का पौर्वापर्य विचारपुरस्सर निरूपण किया गया है। प्रथम अध्याय में मम्मट व उनके टीकाकारों की दृष्टि में काव्यदोष के स्वरूप पर विचार किया गया है। मम्मट द्वारा प्रदत्त दोषलक्षण पर विचार करने से पूर्व काव्यप्रकाश के कतिपय टीकाकारों ने मम्मट के काव्यलक्ष्य 'अदोषो' पद के आधार पर (दोषाभाव अभीष्ट होने पर भी) काव्यप्रकाश में दोष-विवेचन के औचित्य को सयुक्तिक प्रस्तुत किया है। दोषलक्षण में प्रथम पद है - मुख्यार्थ। 'मुख्यार्थ' का अभिप्राय मम्मट ने 'रस' के रूप में स्पष्ट किया है। द्वितीय काव्यप्रकाश में दोष विशेष के स्वरूप का विचार करते हुए, उद्देश क्रम से प्राप्त सर्वप्रथम पददोषों का उल्लेख प्राप्त होता है। पददोषों को मम्मट ने समस्त व असमस्त पद के आधार पर विभाजित किया है। तृतीय अध्याय में मम्मट द्वारा वर्णित वाक्यात्मक शब्ददोषों के स्वरूप पर टीकाकारों के व्याख्यानों का अध्ययन करते हुए यह तथ्य ज्ञात होता है कि वाक्यापकर्षक दोषों के स्वरूप के विषय में टीकाकारों का मत है- वाक्य में किन्हीं पदों के प्रयोग के कारण योग्यता, आकांक्षा व आसक्ति का अभाव होने पर पद-पदार्थान्वय न होने के कारण, वाक्यार्थ ज्ञान में विलम्ब होना अथवा विवक्षित वाक्यार्थ का अन्य अर्थों में अवबोध होना ही वाक्यदोष है। काव्यप्रकाश की टीकाओं में मम्मट द्वारा प्रतिपादित सभी वाक्यदोषों का स्वरूप लक्षणविवेचनपुरस्सर वर्णित किया है। चतुर्थ अर्थदोषविषयक प्रस्तुत अध्ययन से काव्य में अर्थदोष की स्थिति व अर्थ के अपकर्ष के

विभिन्न प्रकारों का परिचय प्राप्त होता है। यथा बालचितानुरञ्जनी तथा साहित्यचूडामणि टीका में यह तथ्य प्रतिपादित किया गया है कि अर्थदोष में अर्थ की अपकर्षता के आधार पर पदार्थ अथवा वाक्यार्थ की स्थिति को जानना चाहिए। आदर्श टीका में अर्थदोष की सत्ता का निधरिण अन्वय-व्यतिरेक के आधार पर करते हुए करते हुए कहा है कि जहाँ अर्थ के कारण काव्यत्व का अपकर्ष हो वहाँ अर्थदोष जानना चाहिए तथा जहाँ अर्थबोध के कारण काव्यास्वाद में कोई विघ्न समुपस्थित नहीं होता, वहाँ अर्थदोष भी नहीं जानना चाहिए। इस प्रकार अर्थदोष के सामान्य स्वरूप के विषय में चर्चा करने के उपरान्त टीकाकारों ने अपुष्ट आदि अर्थदोष भेदों के स्वरूप तथा अन्य दोषों से उनके अन्तर को प्रदर्शित किया है। पंचम अध्याय में मम्मट तथा उनके टीकाकारों की दृष्टि में रसदोषों पर विचार किया गया है। षष्ठअध्याय में मम्मट द्वारा प्रतिपादित काव्यदोषों के अपवाद व परिहार पर विचार किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए दोष के अपवाद व परिहार विषयक अध्ययन को पूर्ववर्ती अध्यायों के आधार पर मुख्य चार भागों में विभाजित किया गया है।

### विषय सूची

1. काव्यदोष-स्वरूप 2. समस्तासमस्तपदगत त्रयोदश दोष 3. वाक्यमात्रगत दोष 4. अर्थदोष 5. रसदोष 6. दोषों के अपवाद एवं परिहार। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

20. शुक्ला (अतुल कुमार)

**वर्तमान भारतीय कर व्यवस्था के विशेष संदर्भ में कौटिलीय कर-व्यवस्था का अध्ययन।**

निर्देशक : प्रो. रणजीत कुमार मिश्र

Th 27548

### सारांश

प्रस्तुत शोध प्रबंध वर्तमान भारतीय कर व्यवस्था के सन्दर्भ में कौटिलीय कर व्यवस्था का अध्ययन कौटिलीय कर प्रणाली का विवेचन करती है साथ ही साथ वर्तमान कर प्रणाली के साथ उसकी तुलना एवं उसके प्रति उपयोगिता को प्रति प्रतिपादित करती है। इस शोध प्रबन्ध में भूमिका के साथ पांच अध्याय हैं। भूमिका में कौटिल्य का सामान्य परिचय एवं उनके ग्रंथों का सामान्य परिचय प्रदान किया गया है। पहले अध्याय के अंतर्गत कौटिलीय कर व्यवस्था का विस्तार पूर्वक विवेचन किया गया है। द्वितीय अध्याय का विषय विभिन्न अन्य ग्रंथों में कर विषयक जो विवरण मिलाता है उसका विवेचन इस अध्याय में किया गया है। तृतीय अध्याय के अंतर्गत वर्तमान भारतीय व्यवस्था के अंतर्गत कर संग्रहण की जो व्यवस्था है उसका विवेचन किया है। चतुर्थ अध्याय में कौटिलीय व्यवस्था के अंतर्गत स्वर्ण एवं मदिरा के व्यापार की प्रक्रिया एवं उस पर लगने वाले करों का विवेचन है। पंचम अध्याय में वर्तमान एवं कौटिलीय कर व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन है। अंतिम में शोध का उपसंहार है।

*विषय सूची*

1. कौटिल्य - अर्थशास्त्र में करी की अवधारणा 2. अन्य धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में कर का स्वरूप 3. भारतीय कर व्यवस्था का वर्तमान स्वरूप 4. मद्य एवं स्वर्ण उद्योग का स्वरूप एवं कर 5. कौटिलीय एवं वर्तमान करों की तुलना। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

21. स्नेहलता

**उत्तरभारतीय अभिलेखों का साहित्यिक वैशिष्ट्य (१२वीं शताब्दी तक)।**

निर्देशक : डॉ. उमाशंकर

Th 27553

*सारांश*

अनुसंधान एक बौद्धिक प्रक्रिया है इस प्रक्रिया के द्वारा किसी सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक समस्या का समाधान किया जाता है। अनुसंधान में शोधार्थी किसी नए तथ्य या सिद्धांत का अन्वेषण करता है। प्रस्तुत शोधप्रबंध "उत्तर भारतीय अभिलेखों का साहित्यिक वैशिष्ट्य (१२वीं शताब्दी तक)" शीर्षक पर प्रस्तुत है। इसमें अभिलेख सामग्री के आधार पर उत्तर भारत का इतिहास प्रस्तुत किया गया है एवं तत्कालीन भारत की भौगोलिक एवं राजनीतिक स्थिति का भी वर्णन किया गया है तथा विभिन्न राजवंशों का राजनीतिक एवं सामाजिक अवदान के साथ-साथ साहित्यिक अवदान का वर्णन भी किया गया है। साहित्यिक अवदान जो की आधुनिक संस्कृत भाषा की महत्वपूर्ण आधारशिला है, में विविध भाषाओं का स्वरूप अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रकृति एवं संस्कृत भाषाओं का उपयोग उत्तरभारतीय अभिलेखों में रीड की हड्डी की भांति परिलक्षित है। अशोक का साम्राज्य बहुत विस्तृत था इसमें अनेक स्थानीय बोलियां जो की प्राकृत कहलाती है, बोली जाती थी, इनमें मगधी प्राकृत सर्वप्रमुख थी। अशोक ने (\*तक्षशिला, पुरोदंत व शार ए कुना को छोड़कर\*) अपने अधिकांश अभिलेखों के लिए इसी भाषा का प्रयोग किया था। संस्कृत भाषा के सर्वप्रथम प्रयोग का गौरव "धनदेव के मथुरा अभिलेख" को प्राप्त हुआ है। भाषा के वैविध्य के साथ अभिलेखों में प्राप्त साहित्यिक स्थल शोधार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

*विषय सूची*

1. उत्तर भारतीय अभिलेखों की वर्ण्य वस्तु : प्रमुख राजवंश 2. उत्तर भारतीय अभिलेख और ऐतिहासिक काव्य 3. उत्तर भारतीय अभिलेखों में भाषा (12वीं शताब्दी तक) 4. उत्तर भारतीय अभिलेखों में साहित्यिक तत्व 5. उत्तर भारतीय अभिलेखों में साहित्यिक तत्व। उपसंहार। परिशिष्ट। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

22. सरिता कुमारी

**प्रक्रिया ग्रंथों में आचार्य वरदराजकृत सार-सिद्धान्तकौमुदी का अवदान।**

निर्देशक : डॉ. कंवर सिंह

Th 27554

सारांश

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध आचार्य वरराज प्रणीत सारसिद्धांत कौमुदी पर आधारित है प्रस्तुत शोध का विषय प्रक्रिया ग्रंथों में आचार्य वरदराजकृत सार-सिद्धान्त कौमुदी का अवदान प्रस्तुत शोध को आठ अध्यायों में विभक्त किया गया है। यह ग्रन्थ प्रक्रिया ग्रन्थों की परम्परा में सबसे प्रारम्भिक ग्रन्थ है, इस ग्रन्थ के रचना का उद्देश्य विद्यार्थियों को प्रारम्भिक स्थिति में व्याकरण ज्ञान से अवगत करना। शोध-प्रबन्ध का प्रथम अध्याय भूमिका के रूप में है इसमें प्रक्रिया क्या है इसका परिचय तथा प्रक्रिया ग्रंथों की परंपरा पूर्ववर्ती आचार्यों का परिचय आचार्य वरदराज का परिचय एवं उनके ग्रंथों का परिचय साथ शोध का विषय प्रवेश किया गया है। द्वितीय अध्याय में संज्ञा एवं संधियों का विवेचन किया गया है जिसमें इनका स्वरूप तथा इनके सूक्ष्म तत्वों का विवेचन है तथा यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि आचार्य ने इस ग्रंथ में इतने कम सूत्रों का उल्लेख किस कारण से किया है। तृतीय अध्याय में सुबन्त प्रकरण का विवेचन किया गया है जिसमें अजन्तपुल्लिंगप्रकरण, अजन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरण, अजन्तनपुंसकलिङ्गप्रकरण, हलन्तपुल्लिंगप्रकरण, हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरण, हलन्तनपुंसकलिङ्ग-प्रकरण, अव्ययप्रकरण, इत्यादि का विस्तृत विवेचन इस अध्याय में है। चतुर्थ अध्याय में तिङ्गन्त प्रकरण का विवेचन किया है इसके अंतर्गत स्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, तुदादि, रूधादि, तनादि, क्र्यादि, चुरादि, प्रक्रिया का साथ यङ्, सन्, णिच्, नामधातु, आदि प्रक्रिया का विवेचन है। पंचम अध्याय में कृदन्तप्रक्रिया का विवेचन है जिसके अंतर्गत कृत्य एवं पूर्वकृदन्त, औणदिक तथा उत्तरकृदन्त का विवेचन किया गया है। षष्ठम अध्याय में विभक्त्यर्थ एवं समास प्रकरण का विवेचन इस अध्याय के अंतर्गत किया गया है। सप्तम अध्याय में तद्धित एवं स्त्री प्रकरण का विवेचन गहनता से किया है। अष्टम अध्याय में प्रतिपादित किया है कि आधुनिक समय में जब पाणिनि को पढ़ाया जा रहा है तब सार-सिद्धांत कौमुदी किस प्रकार से सहायक हो सकती है।

विषय सूची

1. ग्रन्थों का उद्भव और विकास 2. संज्ञा एवं सन्धि 3. सुबन्त प्रकरण 4. तिङ्गन्तप्रकरण 5. कृदन्त प्रकरण 6. विभक्त्यर्थ एवं समास प्रकरण 7. तद्धितप्रकरण एवं स्त्रीप्रत्यय 8. आधुनिक युग में पाणिनीय व्याकरण के शिक्षण में सारसिद्धान्त कौमुदी की भूमिका। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

23. सिंह (अभय)

**पातञ्जल महाभाष्य पर शिवरामेन्द्र सरस्वती कृत 'सिद्धान्तरत्नप्रकाश' टीका का समीक्षात्मक अध्ययन: कृदन्त प्रत्ययों (३.३-३.४) के सन्दर्भ में।**

निर्देशक : प्रो. ओमनाथ बिमली

Th 27555

सारांश

शोधसार समानकर्तृकयोः पूर्वकाले शिवरामेन्द्रसरस्वती का कथन है कि जो प्रदीपकार ने यह कहा कि 'शक्तिशक्तिमतोरेकत्वविवक्षायां क्रिययोरेककर्तृकत्वम्' इति अर्थात् कारकत्व यानि कर्तृत्व आदि को शक्ति कहा गया है वह प्रति-क्रिया में भिन्न होने से अर्थात् एक क्रिया के लिए एक ही कारक की व्यवस्था

होने से दो क्रियाओं में एककर्ता अर्थात् कर्तृरूप एकत्व की वहाँ प्राप्ति नहीं होती है अतः शक्ति तथा शक्तिमान् की अभेद विवक्षा मानकर प्रदीपकार ने इसका समाधान किया है वह ठीक नहीं है क्योंकि शक्ति तथा शक्तिमान् में भेद होने पर भी इन दोनों में एककर्तृकता सम्भव है अर्थात् दोनों में भेद मानने पर भी एककर्तृकता देखी जाती है। जैसे कर्तृसंज्ञा देवदत्तादि की होती है। कर्तृत्वादिक को 'शक्ति' पद से कहा जाता है कर्तृभूत देवदत्तादि को नहीं कहा जाता है किन्तु यहाँ भी एकत्व दिखाई देता है। इसका अभिप्राय है कि शक्ति का अर्थ केवल कर्तृभूतदेवदत्तादि ही नहीं है अपितु कर्तृत्व को भी 'शक्ति' पद से कहा जाता है तथा कर्तृत्व दोनों क्रियाओं में समानरूप से विद्यमान है। अतः शक्ति तथा शक्तिमान् में भेद मानने पर भी इन दोनों में एककर्तृकता सम्भव हो जाती है।

### विषय सूची

1. भविष्यत्कालज में भूतवर्तमानवच्च प्रत्यविधि तथा अनद्यतनवत्प्रत्यय निषेध 2. क्रियातिपत्ति में लृङ् तथा विध्यादि अर्थों में लिङादि प्रत्ययों का विधान 3. अयथाकालोक्त प्रत्ययविधानसाधुत्व तथा तुमर्थक प्रत्ययविधान 4. क्त्वा तथा णमुलादि प्रत्ययविधान 5. कृत्संज्ञा तश्चा लकारार्थ विचार 6. लकारादेशतथा सीयुडादि विधान 7. उपसंहार। परिशिष्ट। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

24. सुचेता  
पॉचवी से सातवीं ईस्वी के मध्य दक्षिण भारतके संस्कृत अभिलेखों के अनुसार सामाजिक एवं प्रशासकीय व्यवस्था का अध्ययन।  
निर्देशिका : डॉ. पूर्णिमा कौल  
Th 27557

### सारांश

The Research work will show the social and administration system of South India, depicted in the Sanskrit inscriptions of the 5th AD to 7th AD period. Few small kingdom and great ruler kingdom and their Kings description is done in the thesis. Common citizens under the great rulers of the above period and their society, their rituals, their life styles is mentioned with the detailed reference in the thesis. Inscriptions also mentioned the administrative system and respective officer's designations.

### विषय सूची

1. दक्षिण भारत : एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 2. पॉचवीं से सातवीं शताब्दी के मध्य के दक्षिण भारत से प्राप्त अभिलेखों का विवेचन 3. दक्षिण भारत के तत्कालीन राजवंश 4. तत्कालीन अभिलेखों में सामाजिक व्यवस्था 5. तत्कालीन अभिलेखों में प्रशासनिक व्यवस्था। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

25. सुयाल (प्रभाकर)  
पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास में विहित व्यतिरेकी विधियों का अध्ययन।  
निर्देशक : प्रो. श्रीवत्स  
Th 27558

सारांश

प्रस्तुत शोधग्रन्थ में पाणिनीय व्याकरण एवं उत्तरपाणिनीय कातन्त्र, चान्द्र, जैनेन्द्र, शाकटायन, सारस्वतीकण्ठाभरण, सिद्धहेमशब्दानुशासन, मुग्धबोध, सारस्वत, सुपद्म और हरिनामामृत व्याकरण सहित नौ व्याकरणों के समास प्रकरण के अध्ययन के आधार पर समास प्रक्रिया में विहित विधियों का व्यतिरेकी अध्ययन कर समीक्षा की गयी है। अध्ययन के आधार पर शोधग्रन्थ को ६ अध्यायों में विभक्त किया गया है। जिनमें प्रथम अध्याय में पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास विषयक अध्ययन के आधार पर समास का निरूपण, समास के लक्षण, पाणिनीय तन्त्र एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में प्राप्त समास सम्बन्धि संज्ञाएं, समास के भेद तथा समास विषयक अधिकार बिन्दु बनाकर प्राप्त जानकारियों की चर्चा एवं सारणी द्वारा उपस्थापन किया गया है। द्वितीय अध्याय में अव्ययीभाव समास का व्यतिरेकी अध्ययन कर समीक्षा की गयी है। तृतीय अध्याय में तत्पुरुष समास का अध्ययन कर समीक्षा की गयी है। चतुर्थ अध्याय में बहुव्रीहि समास का व्यतिरेकी अध्ययन कर समीक्षा की गयी है। पञ्चम अध्याय में द्वंद्व समास का व्यतिरेकी अध्ययन कर समीक्षा की गयी है। छठे अध्याय में सर्वसमासान्त प्रत्ययों का व्यतिरेकी अध्ययन कर समीक्षा की गयी है।

विषय सूची

1. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास निरूपण
  2. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में अव्ययीभाव समास में विहित व्यतिरेकी विधियाँ
  3. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में समास में विहित व्यतिरेकी विधियाँ
  4. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में बहुव्रीहि समास में विहित व्यतिरेकी विधियाँ
  5. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में द्वन्द्व समास में विहित व्यतिरेकी विधियाँ
  6. पाणिनीय एवं उत्तरपाणिनीय व्याकरणों में सर्वसमान्त प्रत्यय विधायक व्यतिरेकी विधियाँ। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।
26. सैनी (आराधना)  
**काशिका के आलोक में ह्रस्वदीर्घविधिविमर्श।**  
 निर्देशिका : डॉ. मोहिनी आर्या  
 Th 27556

विषय सूची

1. ह्रस्वविधि विमर्श
2. दीर्घविधि विमर्श
3. वैकल्पिक ह्रस्वदीर्घविधि विमर्श
4. अनाम ह्रस्वदीर्घविधि विमर्श
5. उपसंहार। ग्रंथ सूची।